P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

# हिन्दी फ़िल्म संगीत तथा हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत का अन्तर्सम्बन्ध

**कमलजीत कौर**
शोधार्थी,
संगीत विभाग,
पंजाबी विश्वविद्यालय,
पटियाला, पंजाब, भारत

**अलंकार सिंह**
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
संगीत विभाग,
पंजाबी विश्वविद्यालय,
पटियाला, पंजाब, भारत

**सारांश**

हिन्दी फ़िल्म संगीत एक ऐसा गुलदस्ता है, जिसमें हमें हर प्रकार के फूलों का समावेश मिलता है। फ़िल्म संगीत ने भारतीय संगीत की प्रत्येक शैली को बखूबी छुआ है जैसे शास्त्रीय संगीत, उप–शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत, भक्ति संगीत इत्यादि। इसी कारण यह जन–जन तक कभी न मिटने वाली छाप छोड़ गया। 1931 में आलमआरा के आगमन से फ़िल्मों में गीतों का प्रयोग देखने को मिला। उस दौर में शास्त्रीय कलाकारों ने शास्त्रीय धुनों और रागों पर आधारित अनेक गीतों की रचना की और शास्त्रीय संगीत को जन–जन तक पहुँचाया। '३० के दशक से ही जब से फ़िल्मों में गीतों का समावेश हुआ तब से ही फ़िल्मी गीतों में शास्त्रीय संगीत का प्रभाव अत्यधिक दिखाई दिया। यहाँ एक बात बताना सन्दर्भ संगत प्रतीत होता है कि फ़िल्मी गीतों ने शास्त्रीय संगीत को आम लोगों तक पहुँचाने में अपनी मूलभूत भूमिका निभाई है। जो लोग शास्त्रीय संगीत सुनने से कतराते थे वह भी फ़िल्मी गीतों द्वारा शास्त्रीय संगीत की ओर उन्मुख हुए।'[1] जहाँ शास्त्रीय संगीत केवल गुरु–शिष्य परम्परा के अधीन केवल कुछ घरानों तक सीमित था, अब फ़िल्म संगीत ने इसे लोकप्रिय बना दिया।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य हिन्दी फिल्म संगीत और हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के विभिन्न अन्तर्सम्बन्धों पर प्रकाश डालना है।

समय–समय पर हिन्दी फ़िल्मों में ऐतिहासिक फ़िल्में बनीं और उनमें शास्त्रीय गीतों के अथाह उदाहरण देखने को मिलते हैं, जैसे तानसेन (1943), बैजू बावरा (1952), मिर्ज़ा ग़ालिब (1954), देवदास (1955), मुग़ल–ए–आज़म (1960), जहाँ आरा (1964), ताज महल (1963), उमराऊ जान (1981) इत्यादि। प्रारम्भिक दौर में शास्त्रीय संगीत का प्रचार–प्रसार अधिक होने के कारण गीतों में रागों का समावेश, शास्त्रीय शैलियों का प्रभाव और शास्त्रीय कलाकारों का फ़िल्म संगीत में योगदान स्पष्ट दिखाई देता है।

हिन्दी फ़िल्म संगीत प्रारम्भ से ही शास्त्रीय संगीत से प्रभावित रहा है। फ़िल्मों में पार्श्व गायन की शुरूआत के उपरान्त शास्त्रीय संगीत में पारंगत व इसकी गहरी सूझ–बूझ रखने वाले संगीत निर्देशकों का आगमन हुआ। जहाँ शास्त्रीय गायकों तथा वादकों ने हिन्दी फ़िल्मी गीतों में योगदान दिया वहीं रागों तथा शास्त्रीय व उपशास्त्रीय शैलियों पर आधारित अनेक गीतों का निर्माण हुआ। प्रस्तुत शोध–पत्र में इन्हीं विभिन्न पक्षों का उदाहरणों सहित विश्लेषण किया गया है।

**मुख्य शब्द :** हिन्दी फ़िल्म संगीत, शास्त्रीय संगीत, राग, शास्त्रीय गायक, शास्त्रीय वादक, शास्त्रीय शैली, फ़िल्मी गीत।

**प्रस्तावना**

शास्त्रीय कलाकारों का रूझान फ़िल्मों की चमक–धमक में कम ही रहा है परन्तु फिर भी बहुत से ऐसे शास्त्रीय कलाकार हैं जिन्होंने समय–समय पर फ़िल्मों में अपनी कला का प्रदर्शन किया। इसमें सबसे अधिक उदाहरण शास्त्रीय गायकों के ही मिलते हैं जैसे फ़िल्म बैजू बावरा (1952) में पंडित डी.वी. पलुस्कर और उस्ताद अमीर खान साहिब ने राग देस पर आधारित 'आज गावत मन मेरो' गीत में जुगलबंदी कर बहुत ही खूबसूरत शास्त्रीय गीत हमारे समक्ष प्रस्तुत किया। शास्त्रीय संगीत के युग–प्रवर्तक गायक उस्ताद अमीर खान साहिब ने फ़िल्म बैजू बावरा (1952) में दो अन्य गीत भी गाये जैसे 'घनन घन घन' तथा 'तेरी जय जयकार'। इसके अतिरिक्त मुग़ल–ए–आज़म (1960) में उस्ताद बड़े गुलाम अली द्वारा गाये गीत 'प्रेम जोगन बन के' में भी भारतीय संगीत की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। यह ठुमरी अंग से गाया राग सोहनी का यादगार गीत है

जिस पर दलीप कुमार और मधुबाला ने अति श्रृंगारिक अभिनय किया है। महान शास्त्रीय गायिका किशोरी अमोनकर ने भी गीत गाया पत्थरों ने (1964) फ़िल्म में शीर्षक गीत गाया। इसके इलावा आपने 'जियरा जले अब जात है सुन मोरी गुइया' (पृथ्वीराज संयोगिता,1946) तथा 'महा झर झर बरसत रे' (दृष्टि,1991) जैसे कई अन्य फ़िल्मी गीत भी गाये। शास्त्रीय गायिका निर्मला देवी ने भी हिंदी फ़िल्मी गीतों में अपनी आवाज़ दी जैसे 'मेरे दिल को सजन समझा दो' (शारदा,1942); 'बोलो बोलो रे सजनवा' (कानून,1943); 'अखियाँ मिला के बेगाना', 'आये हो अभी बैठो तो सही', 'कर लो मुहब्बत कर लो' (जीवन,1944); 'गाये जा गाये जा', 'नैनों से मद मदिरा पिला कर' (घूंघट,1946) इत्यादि। शास्त्रीय संगीत में अपनी ख़ास पहचान बनाने वाले पं. भीमसेन जोशी ने भी फ़िल्मों में गीत गाये जैसे 'केतकी गुलाब जूही', 'पग लागन दे महाराज' (बसंत बहार,1956); 'राम प्रभु अपार' (संत तुलसीदास,1972); 'रघुवर तुम को मेरी लाज' और 'ठुमक ठुमक पग ढुमक' (अनकही,1985) इत्यादि। बहुत से अन्य शास्त्रीय गायकों ने भी फ़िल्मों में अपनी आवाज़ दी जैसे गुलाम मुस्तफ़ा खान, लक्ष्मी शंकर, निर्मला अरुण, गिरिजा देवी, परवीन सुल्ताना, शोभा गुर्टू और राजन–साजन मिश्र इत्यादि। हिंदी फ़िल्मों में शास्त्रीय कलाकरों के इलावा भी बहुत से कलाकारों ने रागों पर आधारित गीत गाये जैसे सहगल, खुर्शीद, सुरैया, लता मंगेशकर, मुहम्मद रफ़ी, मुकेश, मन्ना डे, आशा भोंसले, सुमन कल्याणपुर, महेंद्र कपूर, शमशाद बेगम, हेमंत कुमार इत्यादि।

**परिकल्पना**

संगीत की विभिन्न रचनाओं में कहीं न कहीं शास्त्रीय संगीत का कुछ न कुछ प्रभाव दिखाई देता है चूंकि फ़िल्म संगीत तो सभी प्रकार के संगीत को अपने आप में समेटे हुए हैं, इसलिए हिन्दी फ़िल्मों के विभिन्न गीतों का भी हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत से सम्बन्ध शुरू से ही जुड़ा रहा है, चाहे वह रागों, तालों तथा शास्त्रीय शैलियों के प्रयोग की बात हो या विभिन्न शास्त्रीय कलाकारों के हिन्दी फ़िल्म संगीत में दिए गए योगदान का पक्ष हो। हिन्दी फ़िल्म संगीत और हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत का अन्तर्सम्बन्ध बहुआयामी है।

**अध्ययन का उद्देश्य**

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य हिन्दी फिल्म संगीत और हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के विभिन्न अन्तर्सम्बन्धों पर प्रकाश डालना है।

**फ़िल्म संगीत में शास्त्रीय वादकों का योगदान**

हिन्दी फ़िल्मों में शास्त्रीय संगीत के मूर्धन्य वादकों का योगदान अविस्मर्णीय है। यह योगदान दो प्रकार का है : बतौर वादक व बतौर संगीत निर्देशक। भारतीय संगीत में जहाँ गायन का अपना महत्वपूर्ण स्थान है वहीं वादन का भी। फ़िल्मों का संगीत शास्त्रीय वादकों के बिना अधूरा है। फ़िल्मी गीतों को संगीत निर्देशकों ने वाद्ययंत्रों द्वारा ऐसा पिरोया कि कई गीत तो किसी वाद्य विशेष की धुन से ही पहचाने जाते हैं। उदाहरण के लिए गीत 'रस्म–ए–उल्फ़त' (दिल की राहें, 1973) में उस्ताद रईस खां साहिब की सितार ने इस गीत को एक नयी खुशबू प्रदान की। इसके इलावा इन्होंने कई सुप्रसिद्ध गीतों में सितार वादन किया जैसे 'ढूँढो–ढूँढो रे साजना' (गंगा–यमुना, 1961), 'ओ मेरे सनम' (संगम, 1964), 'नैनों में बदरा छाए' (मेरा साया, 1966), 'मैंने रंगली आज चुनरिया सजना तेरे रंग में' (दुल्हन एक रात की, 1967), 'दो दिल टूटे दो दिल हारे' (हीर राँझा, 1970), 'बइयां न धरो ओ बलमा' (दस्तक, 1970), 'आज सोचा तो आंसू भर आये' (हँसते ज़ख्म, 1973) इत्यादि। इनके इलावा प० रवि शंकर ने भी कई गीतों में सितार वादन किया जैसे 'कैसे दिन बीते' (अनुराधा, 1961), 'होरी खेलत नन्द लाल' (गोदान, 1963), 'हाय रे वो दिन क्यों नहीं आये' (हमजोली, 1970) इत्यादि।

उस्ताद अली अकबर खां ने मशहूर गीत 'मन रे तू काहे न धीर धरे' में सरोद वादन किया जो अपने आप में एक बहुत बड़ी उदाहरण है। उस्ताद बिस्मिल्ला खां साहिब, जो भारत रत्न से सम्मानित हैं, ने फ़िल्म गूँज उठी शहनाई (1959) में मशहूर सितार वादक अब्दुल हलीम ज़ाफ़र खान के साथ जुगलबंदी की। अब्दुल हलीम ज़ाफ़र खान ने इसके इलावा फ़िल्म परवाना (1947) और कोहिनूर (1960) में सितार वादन किया।

इसके इलावा कई तबला वादकों ने भी फ़िल्मों में तबला वादन किया जैसे उस्ताद अल्ला रखा खान साहिब ने फ़िल्म मेरी सूरत तेरी आखें (1963) के गीत 'नाचे मन मोरा मगन' में तबला वादन किया और पं. सामता प्रसाद ने फ़िल्म झनक झनक पायल बाजे (1955), बसंत बहार (1956), मेरी सूरत तेरी आंखें (1963) और गाइड (1965) में तबला वादन किया।

जाने–माने संतूर वादक पं. शिवकुमार शर्मा ने फ़िल्म गाइड (1965) के गीत 'पिया तोसे नैना लागे रे' में सिंतूर वादन किया। इसके इलावा फ़िल्मों में पार्श्व संगीत देने में भी बहुत से शास्त्रीय वादकों का योगदान रहा है जिनमें पन्ना लाल घोष (बांसुरी), उस्ताद अली अकबर खान (सरोद), अब्दुल शकूर (सारंगी), विलायत खान (सितार), बिस्मिल्लाह खान (शेहनाई), गोपाल मिश्र (सारंगी), रामनारायण (सारंगी), सामता प्रसाद (तबला), अब्दुल हलीम ज़ाफर (सितार), रघुनाथ सेठ (बांसुरी), ज़रीन दारूवाला (सरोद), विजय राघव राव (बांसुरी) आदि प्रमुख हैं।[2]

बतौर संगीत निर्देशक भी अनेक शास्त्रीय वादकों ने योगदान दिया। प्रसिद्ध सरोद वादक तिमिर बरन उस्ताद अलाउदीन खां के सबसे पुराने शिष्य थे। कुछ समय बाद आप उदयशंकर की नाट्य मण्डली में शामिल होकर विदेशों में भ्रमण करने लगे। वापिस लौटने के बाद आपने न्यू थियेटर कम्पनी में नौकरी कर ली और पी. सी. बरुआ के निर्देशन में बनी फ़िल्म देवदास (1934) में संगीत दिया। इसके उपरान्त आपने कई फ़िल्मों में यादगार संगीत दिया जैसे पूजारन (1936) और अधिकार (1938), आदि।[3]

सुप्रसिद्ध शहनाई वादक पं. पन्ना लाल घोष ने फ़िल्म अनजान (1941), बरसात (1942), भलाई (1943), सवाल (1943), पुलिस (1944), बीसवीं सदी (1945) और आन्दोलन (1951) इत्यादि फ़िल्मों में संगीत दिया। उस्ताद अल्ला रखा खां ने फ़िल्म माँ–बाप (1945), सबक (1950), बेवफ़ा (1952) और आलमआरा (1956) आदि फ़िल्मों में

बतौर संगीत निर्देशक कार्य किया। सुप्रसिद्ध सितार वादक पं. रवि शंकर ने बहुत सी हिंदी फ़िल्मों में अपना संगीत दिया जैसे मीरा (1945), धरती का लाल (1946), नीचा नगर (1946), अपुर संसार (1959), आराधना (1969) और गोदान (1963) इत्यादि। विख्यात सरोद वादक उस्ताद अली अकबर खां ने फ़िल्म आंधियां (1952), हमसफ़र (1953) और हाउस होल्डर (1963), आदि में अपने संगीत का जादू बिखेरा।[4] प्रसिद्ध सितार वादक विलायत खां साहिब ने ताराशंकर बंदोपाध्याय की कृति 'जलसागर' (1958) पर सत्यजीत रे द्वारा निर्देशित व निर्मित फ़िल्म में भी बतौर संगीत निर्देशक कार्य किया। इसके इलावा आपने 1969 में फ़िल्म दि गुरु के लिए भी संगीत दिया। प्रसिद्ध बांसुरी वादक पं. हरी प्रसाद चौरसिया और संतूर वादक पं. शिवकुमार शर्मा ने फ़िल्मों में शिव–हरि के नाम से सिलसिला (1981), फ़ासले (1985), विजय (1988), चांदनी (1988), लम्हे (1991), डर (1993), परम्परा (1993) और शाहीबान (1993) जैसी फ़िल्मों में अपना संगीत दिया। उस्ताद ज़ाकिर हुसैन ने भी फ़िल्म साज़ (1997) में संगीत निर्देशन का कार्य किया।

इसके अतिरिक्त बहुत से अन्य शास्त्रीय संगीतज्ञों ने भी फ़िल्मों में संगीत दिया। इनमें से दिलीप चन्द्र बेदी, बी.आर. देवधर, हुस्नलाल–भगतराम, फ़िरोज़ दस्तूर, अमरनाथ, ज्ञान प्रकाश घोष, हफीज़ खान, विजय राघव राव, रघुनाथ सेठ, बहादुर खान इत्यादि विशेष हैं।

**फ़िल्मी गीतों में हिन्दुस्तानी रागों का भरपूर प्रयोग**

फ़िल्मों के शुरुआती दौर में ज़्यादातर गायक और संगीतकार शास्त्रीय संगीत का ज्ञान रखते थे। ऐसे में केवल शास्त्रीय गायकों, वादकों ने ही फ़िल्मों में संगीत नहीं दिया अपितु शास्त्रीय संगीत का ज्ञान रखने वाले कई अन्य कलाकारों ने भी फ़िल्मों में संगीत दिया। अनिल बिस्वास, नौशाद, सी. रामचंद्र, एस. डी. बर्मन, खय्याम, रोशन, शंकर–जयकिशन, मदन मोहन, ओ.पी.नैय्यर, सलिल चौधरी, रवि, जयदेव, कल्याण जी–आनंद जी, लक्ष्मीकान्त–प्यारेलाल इत्यादि कुछ ऐसे संगीतकार हैं जिन्होंने समय–समय पर फ़िल्मों में शास्त्रीय धुनों तथा रागों का समावेश कर श्रोतायों को आनन्दित किया तथा उन्हें शास्त्रीय संगीत से जोड़ा।

प्रारम्भ से ही हिंदी फ़िल्मों में संगीत निर्देशकों ने अपनी धुनों में अलग–अलग रागों का समावेश कर गीतों को कर्णप्रिय बनाया। फ़िल्मों में विभिन्न रागों पर आधारित अनेक गीत पाए जाते हैं जैसे लता मंगेशकर द्वारा गाया गया गीत राग गौरी में 'मोहे भूल गए सांवरिया' (बैजू बावरा, 1952), रफ़ी द्वारा गाया गया राग मालकौंस में 'मन तरपत हरी दरसन को आज' (बैजू बावरा, 1952), लता द्वारा गाया गया राग जैजैवंती में 'मनमोहना बड़े झूठे' (सीमा, 1955), लता और रफ़ी द्वारा गाया गया राग सोहनी में 'कुहू–कुहू बोले कोयलिया' (स्वर्ण सुंदरी, 1957), रफ़ी और मन्ना डे द्वारा गाया गया राग ललित में 'तू है मेरा प्रेम देवता' (कल्पना, 1960), रफ़ी द्वारा गाया गया राग हमीर में 'मधुबन में राधिका नाचे रे' (कोहिनूर, 1960) और मन्ना डे द्वारा गाया गया 'पूछो न कैसे मैंने रैन बितायी' (मेरी सूरत तेरी आखें, 1963) राग अहीर भैरव में निबद्ध है। ये कुछ ऐसे गीत हैं जो पूर्णतः शास्त्रीय संगीत और रागों पर आधारित हैं और बहुत लोकप्रिय भी हुए हैं।

राग कल्याण पर आधारित अनेकों गीत हिंदी फ़िल्मों में सुनने को मिलते हैं जैसे 'जा रे बदरा बैरी जा' (बहाना, 1960); 'जब दीप जले आना' (बहाना, 1960); 'एहसान तेरा होगा मुझ पर' (जंगली, 1961); 'वो जब याद आए' (पारसमणि, 1963); 'मन रे तू काहे न धीर धरे' (चित्रलेखा, 1964); चन्दन सा बदन' (सरस्वती चन्द्र, 1968); 'रे मन सुर में गा' (लाल पत्थर, 1971); 'नवकल्पना नवरूप से' (मृग तृष्णा, 1975) आदि। बाद की कुछ फिल्मों के गीत 'घर से निकलते ही' (पापा कहते हैं, 1996), 'तुम दिल की धड़कन में' (धड़कन, 2000) आदि भी राग कल्याण पर आधारित हैं। 'अभी ना जाओ छोड़कर' (हम दोनों, 1961) राग यमन कल्याण पर आधारित गीत है।

राग पहाड़ी पर आधारित भी अनेक गीत हिंदी फ़िल्मों में सुनाई दिए । राग पहाड़ी मुख्य रूप से 1950–1960 के दशक में अत्यधिक सुनने को मिला । उदाहरण के लिए 'सुहानी रात ढल रही' (दुलारी, 1949); 'चौदवीं का चाँद हो' (चौदवीं का चाँद, 1960); 'जो वादा किया वो निभाना पड़ेगा' (ताजमहल, 1963); 'इशारों–इशारों में दिल लेने वाले' (कश्मीर की कली, 1964); 'कोरा कागज़ था ये मन मेरा' (अराधना, 1969) इत्यादि राग पहाड़ी पर आधारित प्रमुख गीत हैं। ख़याम साहब के ज़्यादातर गीत राग पहाड़ी पर ही आधारित हैं जैसे 'पर्बतों के पेड़ो पर' (शगुन, 1964), 'कभी कभी मेरे दिल में' (कभी कभी, 1976), 'आजा रे ओ मेरे दिलबर आजा' (नूरी, 1979), 'ऐ दिले नादां' (रज़िया सुल्ताना, 1983) आदि।

फ़िल्मी गीतों में राग भैरवी का प्रयोग भी अत्यधिक दिखाई देता है। भैरवी में निबद्ध 'लागा चुनरी में दाग' सुनने में सुगम परन्तु शास्त्रीय आधारित तत्वों से भरपूर गीत है। इसके अंत में तराने के बोल इस गीत में शास्त्रीयता का आभास करवाते हैं। पं. रवि शंकर द्वारा संगीत निर्देशित 'सांवरे–सांवरे काहे करो मोसे ज़ोरा–ज़ोरी' (अनुराधा, 1969) भैरवी का सुंदर उदाहरण है। इसके इलावा कई अन्य गीत जैसे 'रमैया वस्ता वईया', 'मेरा जूता है जापानी' (श्री 420, 1955); 'बोल राधा बोल संगम' (संगम, 1964); 'भोर भए पनघट पे' (सत्यं शिवं सुन्दरम, 1978) आदि भी इस राग में सुनने को मिलते हैं। राग भीमपलासी में भी फ़िल्म संगीत की अनेक रचनायें सुनने को मिलती हैं जैसे 'एरी मैं तो प्रेम दीवानी' (नव बहार, 1952), 'मैंने चाँद और सितारों की तमन्ना' (चंद्रकांता, 1956), 'नैनों में बदरा छाए' (मेरा साया, 1966) आदि।

राग दरबारी भी अनेक फ़िल्मी गीतों का आधार बना जैसे 'ओ दुनिया के रखवाले' (बैजू बावरा, 1952), 'याद में तेरी' (मेरे महबूब, 1963), 'तोरा मन दर्पण कहलाये' (काजल, 1965), 'कोई मतवारा आया मेरे द्वारे' (लव इन टोकियो, 1966), 'कि पग घुंघरू बाँध' (नमक हलाल, 1982) आदि। राग शिवरंजनी में भी कई गीत बने जिन्होंने श्रोतायों में लोकप्रियता हासिल की जैसे 'आवाज़ देके हमें तुम बुलाओ' (प्रोफेसर, 1962), 'ओ मेरे सनम'

(संगम, 1964), 'बहारो फूल बरसाओ' (सूरज, 1966), 'दिल के झरोखे में' (ब्रह्मचारी, 1968), 'जाने कहाँ गए वो दिन' (मेरा नाम जोकर, 1970), 'मेरे नैना सावन भादों' (महबूबा, 1976) आदि।

फ़िल्मी गीतों में कई अन्य रागों का प्रयोग किया गया जैसे अड़ाना, अहीर भैरव, आसावरी, कलावती, काफ़ी, केदार, खमाज, गारा, चारुकेशी, छायानट, जौनपुरी, झिंझोटी, तिलंग, तोड़ी, दुर्गा, देस, नन्द, नट बिहाग, पीलू , बहार, बसंत, बागेश्वरी, बिहाग, भटियार, भूपाली, भैरव, मधुवंती, मल्हार, मालकौंस, ललित, वृन्दावनी सारंग, मधमाद सारंग, सिन्धी भैरवी, सोहनी, हमीर, हंसध्वनी इत्यादि।

प्रारम्भिक दौर के ज्यादातर संगीत निर्देशकों ने फ़िल्मों में शास्त्रीय रागों का समावेश कर फ़िल्म जगत को गुणवत्ता प्रदान की । ५० के दशक में शास्त्रीय गीतों का दौर चला जिनमें नौशाद, सी. रामचंद्र, एस. डी बर्मन, शंकर जयकिशन और मदन मोहन प्रमुख थे।[5] इनमें नौशाद साहिब ने फ़िल्मों में शास्त्रीय गीतों की भरमार लादी जिसे शब्दों में बयाँ करना असंभव सा प्रतीत होता है। उदाहरण के लिए बैजू बावरा (1952) फ़िल्म में 13 गीत रागों पर आधारित ही बनाये। इनका एक गीत 'तू गंगा की मौज' जो कि भैरवी राग पर आधारित था, को फ़िल्म फेयर अवार्ड भी मिला।[6] इसके इलावा इन्होंने कई अन्य गीत रागों पर आधारित बनाये जैसे 'ए दिले बेकरार झूम' राग बिहाग (शाहजहाँ, 1946), 'ओ दुनिया के रखवाले' राग दरबारी (बैजू बावरा, 1952) 'आज गावत मन मेरो' राग देसी (बैजू बावरा, 1952), 'मोहे भूल गए सांवरिया' राग गौरी (बैजू बावरा, 1952), 'घनन घनन घन गरजो रे' राग मेघ (बैजू बावरा, 1952), 'मन तरपत हरी दरसन को आज' राग मालकौंस (बैजू बावरा, 1952), 'हो चन्दन का पलना' राग पीलू (शबाब, 1954), 'मोहब्बत की राहों में' (राग जैजैवंती (उड़न–खटोला, 1955), 'मोहे पनघट पे' राग गारा (मुग़ल–ए– आज़म, 1960), मधुबन में राधिका नाचे रे राग हमीर (कोहिनूर, 1960) 'ढूँढो ढूँढो रे साजना' राग पीलू (गंगा–यमुना, 1961), 'ज़िन्दगी आज मेरे नाम से' राग जैजैवंती (सन ऑफ़ इंडिया, 1962), 'कोई मतवाला आया मेरे द्वारे' राग दरबारी (लव इन टोकियो, 1966) इत्यादि। इसके इलावा मदन मोहन ने भी बहुत से ऐसे गीत बनाये जो शास्त्रीय तत्वों से भरपूर हैं जैसे 'अपको प्यार छुपाने की बुरी आदत है' राग देस (नीला आकाश, 1965), 'तू जहाँ जहाँ चलेगा' राग नन्द (मेरा साया, 1966) और 'मैंने रंग ली आज चुनरिया' राग पीलू (दुल्हन एक रात की, 1967) इत्यादि। शंकर जयकिशन के बहुत से गीतों में शास्त्रीय रागों की झलक मिलती है जैसे 'केतकी गुलाब जूही' राग बसंत (बसंत बहार, 1956), 'रसिक बलमा दिल क्यों लगाया' राग भूपाली (चोरी–चोरी, 1956), 'कान्हा जा रे' राग केदार (तेल मालिश बूट पॉलिश, 1961), 'एहसान तेरा होगा मुझपर' राग कल्याण (जंगली, 1961), 'झनक झनक तोरी बाजे पायलिया' राग दरबारी (मेरे हुज़ूर, 1968), 'छम–छम बाजे रे पायलिया' राग दरबारी (जाने अनजाने, 1971) इत्यादि ।

**हिंदी फ़िल्मों में शास्त्रीय शैलियों का प्रयोग**

हिंदी फ़िल्म संगीत प्रत्येक गायन विधा से बाखूबी प्रभावित है। फलस्वरूप विभिन्न शास्त्रीय कलाकारों ने इसमें संगीत की प्रत्येक गायन विधा का समावेश किया। फ़िल्मी गीतों में शास्त्रीय बंदिशों, ठुमरियों, तरानों, कव्वालियों इत्यादि पर आधारित अनेक गीत सुनने को मिलते हैं।

हिंदी फ़िल्मों में ऐसे बहुत से गीत हैं जो पूर्ण रूप से शास्त्रीय बंदिशों पर आधारित हैं। संगीत निर्देशकों ने इन बंदिशों में थोड़े बहुत बदलाव किये और इन्हें फ़िल्मी गीतों का जामा पहनाया। उदाहरण के लिए राग मालकौंस में 'मन तरपत हरि दरसन को आज' (बैजू बावरा, 1952) मुहम्मद रफ़ी ने नौशाद के निर्देशन में गाया। यह गीत तीन ताल में बद्ध पूर्ण रूप से बंदिश का रूप ग्रहण किये हुए हैं और इसमें राग मालकौंस का स्वरुप भी स्पष्ट दिखाई दे रहा है। राग यमन में 'ए री आली पिया बिन' (राग रंग, 1952) लता द्वारा गाया गया गीत शास्त्रीय बंदिश का हुबहू रूप है। राग जैजैवंती में 'मनमोहना बड़े झूठे' (सीमा, 1955) लता द्वारा गाया गया गीत है। इस गीत की शुरुआत राग जैजैवंती के आलाप से होती है और यह एक ताल में निबद्ध है। इस गीत के अंत में गीत को द्रुत लय में करके लता ने खूबसूरत तानें ली हैं जो इस गीत को पूर्ण रूप से द्रुत लय की बंदिश का रूप दे रही है। राग ललित पर आधारित एक युगल गीत 'प्रीतम दरस दिखाओ' (चाचा ज़िदाबाद, 1959) भी पूर्ण रूप से बंदिश का रूप धारण किये हुए है जो लता और मन्ना डे की आवाज़ में है। इस गीत की शुरुआत मन्ना डे के खूबसूरत आलाप से होती है और सितार के एक तुकड़े के साथ स्थाई की शुरुआत होती है। इस गीत में आकार की तानों और सरगमों का प्रयोग सुनने में कर्णप्रिय लगता है। यह गीत तीन ताल में निबद्ध है। ललित में ही 'इक शहनशाह ने बनवा के हसीं ताजमहल' (लीडर, 1964) भी शास्त्रीय तत्वों से ओत–प्रोत सुनाई देता है। 'हरी बसे सकल संसार' (अछूत कन्या, 1936) राग मालकौंस की बंदिश पर आधारित गीत है परन्तु इसकी रचना ध्रुपद गायन विधा से प्रभावित प्रतीत होती है।

फ़िल्मी गीतों में जहाँ शास्त्रीय बंदिशों का प्रयोग हुआ वहीं ठुमरी, दादरा और कव्वाली जैसी उपशास्त्रीय गायन शैलिओं का प्रयोग भी दिखाई देता है। उस्ताद अब्दुल करीम खां साहिब की ठुमरी 'पिया बिन नाहीं आवत चैन' को के. एल. सहगल द्वारा फ़िल्म देवदास (1935) में तिमिर बरन के निर्देशन में गाया गया। इसके अतिरिक्त सहगल द्वारा गायी गयी एक और ठुमरी फ़िल्म स्ट्रीट सिंगर (1938) में सुनने को मिली। राग भैरवी पर आधारित यह ठुमरी नवाब वाजिद अली शाह की रचना है जिसे पं. भीम सेन जोशी ने भी गाया।[7] उस्ताद फ़ैयाज़ खां द्वारा प्रचलित ठुमरी 'काहे को झूठी बनावो बतियाँ' भी मन्ना डे द्वारा फ़िल्म मंजिल (1960) में गायी गयी। उस्ताद बड़े गुलाम अली द्वारा प्रचलित ठुमरी 'का करूँ सजनी आये न बालम' यसुदास द्वारा फ़िल्म स्वामी (1977) में गायी गयी। इसके अतिरिक्त फ़िल्म मुग़ल–ए–आज़म में 'मोहे पनघट पे नन्दलाल छेड़ गयो रे' गीत दादरा शैली

पर आधारित है। यह गीत राग गारा पर आधारित है और दादरा ताल में निबद्ध है। साथ ही साथ उप शास्त्रीय गायन की विधा होरी पर आधारित एक गीत 'तन रंग लो जी आज मन रंग लो' फ़िल्म कोहिनूर (1960) में भी सुनने को मिलता है।

कहानी की ज़रुरत के अनुसार कहीं–कहीं फ़िल्मों में कव्वालियाँ भी सुनने को मिलीं जैसे मुग़ल–ए–आज़म (1960) की प्रचलित कव्वाली 'तेरी महफ़िल में किस्मत आज़मा कर हम भी देखेंगे'। फ़िल्म हम किसी से कम नहीं (1977) की कव्वाली 'है अगर दुश्मन ज़माना गम नहीं' भी बहुत प्रसिद्ध हुई। इसके इलावा कई अन्य फ़िल्मों में भी कव्वालियाँ सुनने को मिलीं जैसे 'हमें तो लूट लिया मिल के हुस्न वालों ने' (अल हिलाल, 1958); 'ये इश्क इश्क है' (बरसात की रात, 1960) 'चांदी का बदन सोने की नज़र' (ताजमहल, 1967); 'पर्दा है पर्दा परदे के पीछे' (अमर अकबर एनथोनी, 1977) आदि।

**वर्तमान की फ़िल्मों में शास्त्रीय संगीत का प्रभाव**

1980–90 के दशक में हिंदी फ़िल्मों में शास्त्रीय संगीत का प्रयोग कुछ कम हुआ परन्तु वर्तमान में देखा जाये तो आज भी फ़िल्मों में शास्त्रीय गीतों का समावेश किया जाता है। बहुत सी ऐतिहासिक फ़िल्मों में शास्त्रीय गीतों और रागों पर आधारित गीत सुनने को मिलते हैं। कुछ निर्देशक जैसे जतिन ललित, संजय लीला भंसाली, इस्माइल दरबार और शंकर महादेवन ने अनेक फ़िल्मों में रागों पर आधारिक गीत बनाये जैसे 'अलबेला सजन आयो री' राग अहीर भैरव (हम दिल दे चुके सनम, 1999), इसे उस्ताद सुल्तान खान, शंकर महादेवन और कविता कृष्णा मूर्ति द्वारा बहुत ही खूबसूरती से गाया गया। 'काहे छेड़–छेड़ मोहे' (देवदास, 2002) राग बसंत में है जिसकी शुरुआत में शास्त्रीय नृत्य के अंग डाले गए हैं और इस गीत की शुरुआत कवित और तबले के बोलों से की जाती है जो कि शास्त्रीयता का एक महत्वपूर्ण और साक्षात् उदाहरण है।

विशाल भारद्वाज की फ़िल्म इश्किया (2009) में बहुत से गीत शास्त्रीय धुनों पर आधारित थे। 'हमरी अटरिया पे' यह ठुमरी पहले बेगम अख्तर द्वारा गायी गयी थी। विशाल भारद्वाज ने इस धुन को नवीन रूप प्रदान कर रेखा भारद्वाज से गंवाया। इसी फ़िल्म का गीत 'बड़ी धीरे जली रैना' रेखा भारद्वाज द्वारा राग ललित में गाया गया। ओमकारा (2006) फ़िल्म का गीत 'ओ साथी रे' राग तोड़ी पर आधारित है और विशाल भारद्वाज ने इसे बड़ी ही खूबसूरती से स्वर बद्ध किया।

संजय लीला भंसाली ने अपनी फ़िल्म बाजीराओ मस्तानी (2015) में अहीर भैरव की परम्परागत बंदिश 'अलबेला सजन' को बड़ी खूबसूरती से राग भूपाली में बदल कर पेश किया जो कि एक नया प्रयोग था।[8] इसी फ़िल्म का गीत 'मोहे रंग दो लाल' पूर्णतयः शास्त्रीय संगीत पर आधारित है जिसमें राग माला नज़र आती है। इसके प्रारंभ में पं० बिरजू महाराज के तबले के बोलों का समावेश भी है। यह राग पूरिया धनाश्री से प्रारंभ होकर यमन तथा कामोद में परिवर्तित होता है और बीच–बीच में राग से हटकर स्वरों का प्रयोग भी इसमें बड़ी खूबसूरती से किया गया है।

**फ़िल्मों में शास्त्रीय संगीत के फ़्यूज़न का प्रभाव**

अध्ययन किया जाए तो इस बात की पुष्टि होती है कि फ़िल्मी गीतों ने हमारे संगीत में फ़्यूज़न तत्वों के प्रचार में भी अपनी मूलभूत भूमिका निभाई है। संगीतकारों ने शास्त्रीय गीतों में फ़्यूज़न तत्व भर के उन्हें नवीन रूप प्रदान किया जिससे आम लोग जो शास्त्रीय गीतों को पसंद नहीं करते थे वो भी इसे सुनने लगे व पसंद करने लगे। उदाहरण के लिए 'भोर भई तोरी बाट तकत पिया' (देहली 6) बंदिश में उस्ताद बड़े गुलाम अली और श्रेया घोषाल की आवाज़ को मिलाकर ए. आर. रहमान ने बहुत ही खूबसूरती से पेश किया। इस गीत में आप ने नए सांगीतिक तत्वों का समावेश कर इस बंदिश को पूर्णतः नवीन कर दिया। इसी प्रकार सुखविंदर सिंह ने फ़िल्म 'हल्ला बोल' (2008) में पीलू पर आधारित एक गीत 'बरसन लागी सावन बुंदिया' गाया जो कि मूलतः गुलाम अली द्वारा गाया गया दादरा है। आप ने इसे पंजाबी लोक संगीत का तड़का लगाकर इतना सुंदर पेश किया कि वह नवीन लगने लगा। ऐसे फ़्यूजन के प्रयोग सबसे अधिक फ़िल्म संगीत में ही देखने को मिलें हैं तथा इन गीतों द्वारा युवा श्रोतायों का रुझान शास्त्रीय संगीत की ओर बढ़ा है।

**निष्कर्ष**

३०वें दशक से अब तक देखा जाए तो हिन्दी फ़िल्मों में शास्त्रीय संगीत का समय–समय पर प्रयोग हुआ। संगीत निर्देशकों ने फ़िल्म की कहानी के अनुसार शास्त्रीय गीतों का प्रयोग किया। जहाँ 30–50 के दशक तक इन गीतों में रागों की शुद्धता पर ख़ास ध्यान दिया जाता था वहीं बाद की फ़िल्मों में शास्त्रीय आधारित गीतों की बजाय पश्चिमी प्रभाव अत्यधिक देखने को मिला। कुछ चुनिन्दा ऐतिहासिक फ़िल्मों में ऐसे गीतों की भरमार भी दिखाई देती है। यह गीत आम लोगों द्वारा तो पसंद किये ही गए अपितु संगीत के छात्रों के लिए भी रागों को सीखने, समझने और उनका अध्ययन करने का आधार बनें। राग अहीर भैरव की बंदिश 'अलबेला सजन' का प्रयोग बहुत सी शिक्षा संस्थायों में किया जाता है। यह गीत न केवल श्रोतायों के ज़हन में रचे बसे अपितु संगीत के छात्रों के लिए बंदिशों का आधार भी काफ़ी हद तक बने। वर्तमान में शास्त्रीय फ़्यूजन युक्त चल रहे ऐसे गीतों ने कई नए और अच्छे कलाकारों को भी जन्म दिया है जिनमें श्रेया घोशाल, सुनिधि चौहान, अरिजीत सिंह, नीति मोहन जैसे कई कलाकार विशेष उल्लेखनीय हैं। आज की फ़िल्मों में शास्त्रीय संगीत में मिलावट अत्यधिक दिखाई देने लगी है। शास्त्रीय गीतों का प्रयोग भी आजकल फ़्यूज़न के रूप में अधिक किया जा रहा है।

**शोध–स्त्रोत व संसाधन**

पूर्व प्रकाशित पुस्तकें, समाचार पत्र व विभिन्न वेब साइट्स से प्राप्त जानकारी।

**अंत टिप्पणी**

1. *'सौरभ', डॉ इंदु शर्मा, 2006, भारतीय फ़िल्म–संगीत में ताल–समन्वय, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ० 80.*

2. *गर्ग, डॉ० उमा, 2000, संगीत का सौन्दर्य–बोध (फ़िल्म संगीत के सन्दर्भ में ), संजय प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 123.*
3. *गर्ग, डॉ. मुकेश, फ़िल्म संगीत इतिहास अंक, जनवरी–फ़रवरी 1998, संगीत कार्यालय, हाथरस, (उ. प्र.), पृ० 105.*
4. *वही.*
5. *अनंतरामन, गणेश, 2008, बोलीवुड मेलोडीज़ (ए हिस्ट्री ऑफ़ हिंदी फ़िल्म सॉग), पेंगुइन बुक्स, नई दिल्ली, पृ० 8.*
6. *www.saavn.com*
7. *www.nothingtodeclare.in*
8. *www.thehindu.com*